THE HINDU

Date: 05-09-26

Warning on warming

India must shed its victim mindset while acting on climate change

Editorial

The United Nations Environment Programme's report, Limiting Overshoot, is a reminder that breaching the 1.5°C global warming limit would bring irreversible losses that adaptation cannot undo. Were all countries to deliver on their climate pledges today, the globe is still poised to heat 1.8°C and on current policies, 2.6°C. Given that the limit has already been breached — and, with the ongoing heating in the central equatorial Pacific expected to burgeon into one of the strongest El Niños in recent history, likely again in 2027 — the report is an acceptance of the scientific reality that we are in a 1.5°C world, while resisting the conclusion that nothing more can be done. The authors describe an "overshoot, peak and decline" pathway under which average global temperatures rise above 1.5°C but countries collectively hold the peak as low as possible and then bring them back below the limit by the end of the century. Neutralising the heating effect of even a tenth of a degree, the report argues, is far harder than preventing that rise in the first place. This in itself is nothing new. What is new is the emphasis on greenhouse gases beyond carbon dioxide. Action on methane, responsible for about 0.5°C of current warming, is considered the most effective way to slow warming in the near-term. Over 155 countries — India is not among them — have joined the Global Methane Pledge to cut anthropogenic methane at least 30% below 2020 levels by 2030.

That absence reflects the familiar tension between reports of this nature, which emphasise mitigation, and major developing economies such as India. They stress that they are already en route to moving away from fossil fuels and, being vulnerable to the impacts of historical stocks of carbon, deserve greater financial support and affordable technology from richer developed countries responsible for the crisis. The latest report unfortunately has little to say on adaptation finance, though there are previous assessments on the topic. With countries set to convene in Türkiye in November for COP31, familiar disagreements are likely to surface — but in the aftermath of the Bhotekoshi disaster in Nepal, India's position too has been complicated. Nepal's Foreign Affairs Minister, Shisir Khanal, has said that major industrial emitters such as China, the United States and India must consider the impact of rising temperatures on small countries such as Nepal. For India, this list means that a section of the world — despite India's position as a victim of climate change with below-world-average per capita emissions — sees it as part of the problem. India must take such perceptions seriously and, rather than ignore the reality of a 1.5°C world, should calibrate its messaging to adapt to it.

दैनिक भास्कर

Date: 05-09-26

हमारी नीतियों के केंद्र में किसान भी दिखने चाहिए

संपादकीय

चीनी के दाम बांधो, बड़े शहरों के लिए प्याज एक्सप्रेस चलाओ, गेहूं-चावल का निर्यात रोको, दाल के दाम बढ़ें तो आयात करो- इन तमाम नीतियों में किसान कहां है? दाम बढ़ता है तो किसान को फायदा होता है, लेकिन महंगाई शब्द राजनीतिक रूप से नुकसानदेह है। देश में इस वर्ष कृषि - जिसमें पशु-कुक्कुट मत्स्य पालन भी शामिल हैं- का कुल ग्रॉस वैल्यू एडेड (जीवीए) 52.08 लाख करोड़ रुपए था। इसमें 9.31 करोड़ कृषक परिवार लगे हैं। यानी प्रति परिवार उत्पादन हुआ 46,600 रु.। कृषि में इनपुट कास्ट 50% होती है और यह तब है, जब इसमें परिवार का अपना श्रम, खेती में लगी रकम, जमीन के मूल्य पर मिलने वाला ब्याज और खेती के उपकरणों का डेप्रिसिएशन (आखिरी दो पर उद्योगों को छूट मिलती है) शामिल नहीं किया गया है। इन किसान परिवारों में 86% के पास दो हेक्टेयर से कम जमीन है यानी इस वर्ग के 8.06 करोड़ किसान परिवारों के पास कुल 14.65 करोड़ हेक्टेयर ऑपरेशनल जोत का आधा ही है। तब ऐसे हर परिवार के हाथ प्रति माह 16, 200 रु. का ही उत्पादन आता है। बड़े 14% किसानों के पास जमीन का बाकी आधा हिस्सा है, यानी इनके हाथ उत्पादन का हर माह 1, 12,500 आता है। चूंकि कृषि में इनपुट लागत आधी है लिहाजा 8.06 करोड़ लघु-सीमान्त किसान परिवारों की आय 8100 रु. प्रतिमाह ही रह जाती है। इस पर विचार करना होगा।

Date: 05-09-26

एआई सीखने की जगह नहीं लेगा, पर उसका तरीका जरूर बदलेगा

प्रो. अविनाश कुमार अग्रवाल, (आईआईटी जोधपुर के निदेशक)

जेन-जी और जेन-अल्फा ऐसी शैक्षणिक दुनिया में प्रवेश कर रहे हैं, जो पिछली पीढ़ियों से बिल्कुल अलग है। इनके पास इंटरनेट, डिजिटल प्लेटफॉर्म, स्मार्टफोन, एआई तक अभूतपूर्व पहुंच है। आज एक छात्र दुनिया के बेहतरीन संसाधनों से सीख सकता है, एआई को लर्निंग असिस्टेंट की तरह इस्तेमाल कर सकता है, जटिल प्रणालियों का सिमुलेशन कर सकता है, बड़े डेटासेट का विश्लेषण कर सकता है और दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में बैठे लोगों से सहयोग कर सकता है।

लेकिन जानकारी तक पहुंच को ज्ञान और एआई तक पहुंच को बुद्धिमत्ता नहीं समझना चाहिए। आज की शिक्षा के सामने सबसे बड़ी चुनौती यह है कि छात्र सिर्फ जानकारी और जवाब हासिल करना न सीखें, बल्कि आलोचनात्मक ढंग से सोचें, सही सवाल पूछें, तर्क करें, रचनात्मक तरीके से काम करें और अपने फैसलों की जिम्मेदारी भी लें। शिक्षा व्यवस्था को अब सूचना-केंद्रित मॉडल से दक्षता, जिज्ञासा और प्रॉब्लम-सॉल्विंग-सेंट्रिक मॉडल की ओर बढ़ना होगा।

एआई शिक्षा में सीखने की जगह तो नहीं लेगा, लेकिन उसे बढ़ाने वाला माध्यम जरूर बनेगा। छात्र इसका इस्तेमाल जानकारी पाने, वैकल्पिक व्याख्याएं समझने, तत्काल फीडबैक लेने और अलग-अलग परिस्थितियों का सिमुलेशन करने के लिए कर सकते हैं। लेकिन जरूरी है कि उनकी बुनियादी समझ इतनी मजबूत हो कि वे एआई के जवाब पर सवाल उठा सकें, उसकी गलती पहचान सकें और जानकारी को वेरिफाई कर सकें।

सबसे विकसित एआई मॉडल भी गलती कर सकते हैं, इसलिए छात्रों को एआई के जवाब को आंख मूंदकर स्वीकार करने की बजाय उसे परखने और तकनीक का जिम्मेदारी से इस्तेमाल करने की क्षमता विकसित करनी होगी। लक्ष्य सिर्फ एआई यूजर नहीं, बल्कि स्किल्ड, इनोवेटिव और जिम्मेदार मनुष्य तैयार करना होना चाहिए।

जब जानकारी हर जगह उपलब्ध है तो शिक्षक को भी अपनी भूमिका बदलनी होगी। टीचर अब सिर्फ जानकारी पहुंचाने वाला व्यक्ति नहीं हो सकता। उसे मेंटर, फैसिलिटेटर, चिंतक और मार्गदर्शक की भूमिका निभानी होगी। छात्रों को यह समझने में मार्गदर्शन देना होगा कि कौन-सी जानकारी विश्वसनीय है, ज्ञान कैसे निर्मित होता है और उसे मानवता के लिए सार्थक समाधान में कैसे बदला जा सकता है।

जेन-जी और जेन-अल्फा के डिजिटल रूप से सक्षम होने का मतलब यह नहीं है कि उन्हें अनुशासन की कम जरूरत है। बल्कि उन्हें अलग तरह के अनुशासन की जरूरत है। उन्हें अपना ध्यान नियंत्रित करना, तकनीक का जिम्मेदारी से इस्तेमाल करना, लगातार काम करना, नैतिक फैसले लेना और अपने काम के परिणामों के प्रति जवाबदेह रहना सीखना होगा।

अब शिक्षक-छात्र सम्बंध भी शिक्षा के केंद्र में रहेंगे और एआई के दौर में इसकी भूमिका और महत्वपूर्ण होगी। शिक्षा में तकनीक को मानवीय पक्ष का विकल्प नहीं, बल्कि उसका सहायक बनाना होगा।

मौजूदा शिक्षा व्यवस्था की बुनियाद आज भी प्रासंगिक है। बदलाव का मतलब पुराने सिस्टम को खत्म करना नहीं, बल्कि उसे अगले चरण तक ले जाना है। गणित, विज्ञान, इंजीनियरिंग, ह्यूमैनिटीज, कम्युनिकेशन, नैतिकता और आलोचनात्मक-चिंतन जैसे बुनियादी विषयों को बनाए रखते हुए इन्हें एआई, डेटा साइंस, रोबोटिक्स, उन्नत मैन्युफैक्चरिंग, बायोटेक्नोलॉजी, सेमीकंडक्टर्स, ऊर्जा, स्वास्थ्य-सेवा और जलवायु तकनीकी जैसे उभरते क्षेत्रों से जोड़ना होगा।

हमें अब शिक्षा को ज्यादा लचीला और बहुआयामी बनाना होगा। एनर्जी, हेल्थकेयर, मोबिलिटी, जलवायु परिवर्तन, कृषि, जल, शहरीकरण सम्बंधी 21वीं सदी की समस्याओं का समाधान किसी एक विषय के जरिए नहीं हो सकता। इसके लिए इंजीनियरों, वैज्ञानिकों, डिजाइनरों, समाज-विज्ञानियों और नीति-निर्माताओं को अपने-अपने दायरों से बाहर निकलकर साथ काम करना होगा।

जेन-जी और जेन-अल्फा टेक्नोलॉजी के साथ सहज हैं। यह उनकी बड़ी ताकत है। चुनौती तब आती है जब तेजी से सूचनाओं को कंज्यूम करने की आदत गहराई से सीखने और समझने के लिए जरूरी धैर्य की जगह ले लेती है। इसलिए क्लासरूम में सीखने का ऐसा माहौल भी हमें बनाना होगा, जहां छात्र गहराई से एक्सप्लोर करना भी सीखें।

दैनिक जागरण

Date: 05-09-26

इसरो का नया अध्याय

संपादकीय

आंध्र प्रदेश के श्रीहरिकोटा द्वीप पर भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन यानी इसरो ने सफलता का एक नया अध्याय लिखा। यह देश के पहले इमेजिंग सैटेलाइट के लांच के रूप में सामने आया। यह एक अत्याधुनिक अर्थ इमेजिंग सैटेलाइट है। यह देश को रियल टाइम निगरानी और रणनीतिक डाटा उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। यह सैटेलाइट भारत को ऐसी क्षमता से लैस करेगा, जिसकी आवश्यकता लंबे समय से महसूस की जा रही थी। यह सैटेलाइट किसी क्षेत्र पर लगातार नजर रखने की क्षमता से लैस है। पृथ्वी से हजारों किमी ऊपर से यह सैटेलाइट भारतीय उपमहाद्वीप के साथ-साथ आसपास के सागरों और रणनीतिक रूप से संवेदनशील

क्षेत्रों पर लगातार निगाह रख सकेगा। यह बंगाल की खाड़ी में बन रहे चक्रवातों, जंगलों की आग, पर्यावरणीय बदलावों की निगरानी में भी सहायक होगा। इसीलिए इसे अंतरिक्ष में भारत की आंख कहा जा रहा है। इसकी महत्ता का अनुमान इससे भी लगाया जा सकता है कि इसके प्रक्षेपण के समय नौसेना और वायुसेना के अधिकारी श्रीहरिकोटा में मौजूद थे। स्पष्ट है कि इस सैटेलाइट का उपयोग केवल नागरिक क्षेत्र तक सीमित नहीं है। यह राष्ट्रीय सुरक्षा को मजबूत करने में भी मदद करेगा।

इसरो की नवीनतम सफलता अंतरिक्ष क्षेत्र में भारत की बढ़ती क्षमताओं को दर्शाती है। अंतरिक्ष में भारत की एक और छलांग का महत्व इससे बढ़ जाता है, क्योंकि कुछ समय से इसरो का भरोसेमंद राकेट पीएसएलवी लगातार नाकाम हो रहा था। इसके चलते इसरों की सैटेलाइट लांचिंग क्षमता को लेकर सवाल उठने लगे थे। यह अच्छा हुआ कि इसरो के विज्ञानियों ने इन सवालों का जवाब शानदार तरीके से दिया। इस सफल मिशन ने भारत की अंतरिक्ष एजेंसी को एक नई ऊर्जा प्रदान की है। इसके बाद भी यह ध्यान रहे कि इसरो को अभी कई चुनौतियों का सामना करना है। इनमें कई सैटेलाइट की लांचिंग के साथ गगनयान मानव अंतरिक्ष मिशन भी है। गगनयान का पहला मानव रहित मिशन इसी वर्ष के अंत तक प्रस्तावित है। चूंकि अंतरिक्ष क्षेत्र को निजी क्षेत्र के लिए भी खोल दिया गया है, इसलिए इसरो के सामने एक अन्य चुनौती कुशल मानव संसाधन को बनाए रखने की भी है। सरकार को यह सुनिश्चित करना होगा कि इसरो बजट और संसाधनों की कमी के चलते प्रतिभाओं के अभाव का सामना न करने पाए, क्योंकि यदि ऐसा होता है तो महत्वपूर्ण अनुसंधान कार्यों पर विपरीत असर पड़ सकता है। इसे सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए कि इसरो के भावी मिशन तय समय में पूरे हों। इस अंतरिक्ष एजेंसी के लिए यह भी आवश्यक है कि वह हर मामले में आत्मनिर्भर बने और अपनी उत्कृष्टता सिद्ध करती रहे, क्योंकि आने वाले समय में प्रतिस्पर्धा बढ़ने वाली है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 05-09-26

कौशल विकास की नए सिरे से हो परिकल्पना

रमा बिजापुरकर, (लेखिका ग्राहक आधारित कारोबार रणनीति के क्षेत्र में कारोबारी सलाहकार हैं)

पिछले महीने जारी हुई नीति आयोग की रिपोर्ट 'रीइमेजिनिंग स्किलिंग फॉर विकसित भारत ऐट 2047' यानी '2047 के विकसित भारत के लिए कौशल की नए सिरे से परिकल्पना' अपने शीर्षक के अनुरूप और बेहतर हो सकती थी। रीइमेजिनिंग का तात्पर्य है उन बातों को स्पर्श करना और प्रश्न करना जिन पर अब तक प्रश्न नहीं उठाए गए हैं। यह केवल मौजूदा मशीनी प्रक्रियाओं को सुधारने या परिचालन व्यवस्था को उन्नत करने की बात नहीं है बल्कि ढांचे और मूल सवालों को हल करने की बात है। इतना ही नहीं जरूरत पड़ने पर एकदम अलग समाधान भी तैयार किया जा सकता है।

रिपोर्ट ने खोज, पहुंच, वहनीयता, इंटर्नशिप और प्रमाणन जैसी चीजों में सुधार की पेशकश की है। फिर भी यह एक ऐसी फैक्ट्री जैसी लगती है जिसे दक्षता, पैमाने और उत्पादकता बढ़ाने के लिए पुनः डिजाइन किया गया है बिना यह पूछे कि जो उत्पाद यह तैयार कर रही है उन्हें मूल रूप से अलग होना चाहिए या नहीं और क्या यह फैक्ट्री उन्हें बना सकती है या बनाना चाहिए।

रिपोर्ट ने युवाओं से मौजूदा कौशल प्रणाली की समस्याओं पर बात की और ग्राहकों की बात सुनी लेकिन यह सवाल कि मौजूदा पेशकश में क्या सही या गलत लगता है, यह प्रश्न अभी भी उत्पाद केंद्रित है न कि उपभोक्ता केंद्रित।

नए सिरे से परिकल्पित कौशल-विकास व्यवस्था का निर्माण काम की बदलती दुनिया को केंद्र में रखकर किया जाना चाहिए। मसलन आर्टिफिशल इंटेलिजेंस उद्योग की बेतहाशा वृद्धि के परिणामस्वरूप हजारों की संख्या में इलेक्ट्रीशियन और बढ़ई भर्ती किए जा रहे हैं।

जर्नल ऑफ द अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन में प्रकाशित एक हालिया लेख में यह अनुमान दिया गया कि 2030 तक स्वायत्त एआई मानव-सहायता प्राप्त देखभाल से आगे निकल सकता है और यह भी कि निर्णय-प्रक्रिया में मनुष्यों को बनाए रखना, एआई के प्रदर्शन में बाधा डाल सकता है। यहां तक कि समानुभूति के मामले में भी जिसे आमतौर पर मनुष्य का आखिरी मजबूत पक्ष माना जाता है। लेख के अनुसार चैटबॉट इसमें मनुष्यों से बेहतर प्रदर्शन करते हैं।

भविष्य लगातार आकार ले रहा है। उसकी रूपरेखा का अनुमान लगाना कठिन है और कौशल की मांग की हर नई लहर का जीवनकाल भी संभवतः छोटा होने वाला है। इसलिए वास्तव में नए सिरे से कल्पना करने का अर्थ ऐसे 'मेटा सिस्टम' की संरचना तैयार करना है जो लगातार हो रहे बदलावों को पहचान सके उन्हें समझ सके और उनके अनुरूप लगातार प्रतिक्रिया दे सके।

रिपोर्ट की एक प्रमुख विशेषता यह है कि वह 'उद्योग' नाम की चीज पर बहुत अधिक निर्भर करती है। यह उद्योग पाठ्यक्रमों को सह-डिजाइन करेगा, अप्रेंटिसशिप का स्वामित्व संभालेगा, प्लेसमेंट उपलब्ध कराएगा और इसी तरह की अन्य भूमिकाएं निभाएगा। लेकिन 'उद्योग' को बड़े कारोबारी समूहों और संगठित क्षेत्र की उन कंपनियों के रूप में देखने की धारणा जो बड़े पैमाने पर रोजगार पैदा करती हैं, अब अप्रासंगिक हो चुकी है। आज ऐसे उद्योग में कार्यबल का केवल एक बहुत छोटा हिस्सा ही रोजगार पाता है। यह मानकर चलना कि 2047 तक स्थिति उलट जाएगी जोखिम भरा हो सकता है।

नए सिरे से कल्पना करने में यह सवाल शामिल है कि आज उद्योग क्या है और क्या वह वे सभी भूमिकाएं निभा सकता है जिनकी अपेक्षा यह रिपोर्ट उससे करती है? क्या छोटे और मझोले उपक्रम जो आज भारत में सबसे बड़े नियोक्ता हैं, वही उद्योग बन सकते हैं जो इन अपेक्षाओं को पूरा करे? इसकी संभावना कम है जब तक कि उन्हें इस भूमिका को निभाने में सक्षम और इच्छुक बनाने के लिए कुछ नए सिरे से कल्पना न की जाए।

बैंकों को शिक्षा ऋण अधिक आसानी से और बड़े पैमाने पर उपलब्ध कराने के लिए कैसे तैयार किया जा सकता है इस पर नए सिरे से विचार करना बेहद उपयोगी होता। हां, आजीवन सीखने के लिए वाउचर भविष्य में मुफ्त खाद्यान्न की तरह एक नया सार्वभौमिक सहारा बन सकते हैं।

कौशल-विकास संस्थाओं को उनके प्लेसमेंट के आधार पर वित्तपोषित करने की सिफारिश चिंताजनक है। वास्तव में लक्ष्य तो ऐसे उच्चस्तरीय व्यावसायिक शिक्षा संस्थानों का निर्माण होना चाहिए जो बदलती दुनिया के लिए उच्च गुणवत्ता वाले 'उत्पाद' यानी लोगों को तैयार करने, उन्हें प्रभावी ढंग से शिक्षा-प्रशिक्षण देने और अपनी व्यवस्था को लगातार बदलती जरूरतों के अनुरूप ढालने में सक्षम हों।

रिपोर्ट जिस परिणामोन्मुखी व्यवस्था की वकालत करती है उसका अर्थ यह होना चाहिए कि संस्थानों को अनुदान ऐसे संस्थागत मानकों के आधार पर दिया जाए जो शिक्षा के लिए अधिक उपयुक्त हैं न कि प्लेसमेंट के आधार पर जो किसी बिक्री एजेंसी के लिए तो अधिक उपयुक्त हो सकता है और जिसमें हेराफेरी की आशंका भी रहती है। शिक्षा मंत्रालय पहले ही ऐसे गुणवत्ता मानकों पर काम कर चुका है।

रिपोर्ट में अन्य देशों का भी संदर्भ दिया गया है लेकिन उनसे चुनिंदा चीजें ही ली गई हैं। अमेरिका में भी व्यावसायिक शिक्षा को लेकर विमर्श बदल रहा है। दिलचस्प बात यह है कि वहां स्नातक डिग्री हासिल कर चुके उन लोगों के लिए भी अनुदान उपलब्ध हैं, जो दोबारा प्रशिक्षण लेकर अपना कौशल बदलना चाहते हैं। भारत के लिए यह बेहद प्रासंगिक और आसानी से अपनाया जा सकने वाला उपाय है। इससे कौशल-विकास को मुख्य धारा में लाने का लक्ष्य भी हासिल हो सकता है और पारंपरिक कॉलेज शिक्षा तथा कौशल विकास के बीच मौजूद उस कथित पदानुक्रम या वर्ग-व्यवस्था को कमजोर किया जा सकता है, जिसका उल्लेख रिपोर्ट स्वयं करती है।

यह पूरी दुनिया में एक आम समस्या है और जर्मनी दोनों व्यवस्थाओं के बीच अधिक समानता स्थापित करके इससे निपटने की कोशिश कर रहा है।

शायद कौशल-विकास शब्द को ही नए सिरे से परिभाषित करने पर विचार करना चाहिए। अमेरिका और जर्मनी दोनों ही अपने-अपने संदर्भ में शिक्षा शब्द को शामिल करते हैं। क्रमशः करियर और तकनीकी शिक्षा तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण और शिक्षा। क्या कौशल शब्द में बहुत अधिक राजनीतिक पूंजी निवेश हो चुकी है? या फिर क्या कौशल विकास मंत्रालय को शिक्षा मंत्रालय से अलग अपनी स्वतंत्र पहचान बनाए रखनी चाहिए?

आज हमारे पास कौशल विकास की मौजूदा व्यवस्था के इंजन की काफी हद तक अच्छी दोबारा इंजीनियरिंग और ट्यूनिंग हो चुकी है। अब हम उस वास्तविक नई परिकल्पना का इंतजार कर रहे हैं यानी मानव विकास के क्षेत्र में हमारे 1991 के क्षण का।

Live हिन्दुस्तान.com

Date: 05-09-26

आईएएस वही छोड़ते हैं जिनके पास विकल्प

अनिता भटनागर जैन, (पूर्व आईएएस)

शाम का धुंधलका था। हमारी धूल-धूसरित गाड़ी उबड़- खाबड़ सड़क पर हिचकोले खाती हुई आगे बढ़ी तो हेडलाइट सामने लगी होर्डिंग पर पड़ी। उसे देखकर मैं अवाक् रह गई। सुदूर ग्रामीण इलाके में ऐसी होर्डिंग- 'आईएएस कोचिंग एक्सपर्ट द्वारा....।' अनेक राज्यों में विद्यार्थियों के साथ अपने अब तक के 'ऑनलाइन इंटरेक्टिव सेशन' में जब मैंने यह पूछा कि वे क्या बनना चाहते हैं, तो 70 प्रतिशत का उत्तर यही मिला कि आईएएस। किसी ने शायद मजाक में कहा था कि अब सिविल सर्विस परीक्षा तो नेशनल हॉबी बन गई है।

ऐसे में हाल ही में एक आईएएस अधिकारी के सेवा से त्यागपत्र का विषय व्यापक चर्चा का विषय बन गया है। हर व्यक्ति अपनी सोच के अनुसार इस त्यागपत्र की पृष्ठभूमि पर अटकलें लगा रहा है। अनेक लोगों के विचारों को पढ़कर बचपन की हाथी और छहदृष्टिहीन व्यक्तियों की कहानी याद आ गई। हाथी तो एक ही था, पर हरेक व्यक्ति ने अपने दृष्टिकोण से उसे अलग समझा ।

इस त्यागपत्र का इतनी प्रतिक्रिया का विषय बनना स्वाभाविक था। आखिर आईएएस जैसी सेवा से कोई त्यागपत्र क्यों देगा ? इस सेवा में चयनित होना ही चमत्कार से कम नहीं माना जाता, जिसमें अथक परिश्रम के अलावा ईश्वरीय शक्ति को भी श्रेय दिया जाता है। इस तीन चरण की परीक्षा में, जिसमें पूरा एक वर्ष लगता है, साल

2025 में करीब छह लाख अभ्यर्थियों में से कुल 958 रिक्तियों में आईएएस के लिए 180 चयनित हुए, यानी जो लोग इस तपस्या रूपी परीक्षा को देते हैं, उनमें से सिर्फ 0.03 प्रतिशत ही आईएएस के लिए चयनित हो पाए।

हमारे देश की सिविल सेवा को सरदार वल्लभभाई पटेल ने 'स्टील फ्रेम ऑफ इंडिया' कहा था। इस सेवा में राष्ट्र के सामाजिक-आर्थिक निर्माण के अनेक सुअवसर मिलते हैं। वैसे तो हर सेवा, उद्योग, आदि से राष्ट्र-निर्माण में योगदान होता है, पर इस सेवा में समाज के हाशिये पर बैठे व्यक्तियों का कल्याण कर पाने की क्षमता है। अनेक राज्यों में इस सेवा का बड़ा सामाजिक स्टेटस भी है। विवाह के लिए इस सेवा के लड़कों की बहुत मांग होती है। जीवन भर की आर्थिक सुरक्षा, समयबद्ध प्रोन्नति और छठे वेतन आयोग के बाद निर्धारित वेतन, आदि ने इसे और आकर्षक बना दिया है।

बहरहाल, हालिया इस्तीफा इकलौता प्रकरण नहीं है। पहले भी त्यागपत्र हुए हैं और कई ने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ली है। जैसी कि खबरें हैं, साल 1995 से 2025 के बीच करीब 300 अधिकारियों ने आईएएस, आईपीएस, आईएफएस सेवा से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ली। कई अधिकारी सेवा छोड़कर विश्व बैंक, संयुक्त राष्ट्र, प्रतिष्ठित देश और विदेशी निजी विश्वविद्यालयों में गए, तो कुछ प्रतिष्ठित पत्रकार बन गए। कुछ अधिकारियों ने सेवा छोड़कर चुनाव लड़ा और मंत्री भी बने।

सर्विस छोड़ने के कई कारण हो सकते हैं। आईएएस में प्रत्येक अधिकारी को सर्विस हेतु राज्य आवंटित होते हैं। कुछ अधिकारी अपने मूल राज्य से दूरी के कारण पारिवारिक दायित्वों के निर्वहन में कठिनाई या पूर्णतया भिन्न माहौल और संस्कृति में रहने से समस्या का अनुभव करते हैं। शुरुआती काल में अनेक छोटे स्थानों पर पोस्टिंग होती है, जहां कई सहूलियतें नहीं होतीं। फिर विवाह और परिवार, जीवन-यात्रा के महत्वपूर्ण अंग हैं। पति-पत्नी, दोनों में से एक निजी क्षेत्र में हो, तो जरूरी नहीं कि वे एक स्थान पर ही रहें। जीवन में नौकरी का काफी महत्व है, परंतु सदैव परिवार और रिश्तों की कीमत पर नहीं।

सोशल मीडिया के कारण सेवा की परिस्थितियों में व्यापक बदलाव आया है। सिविल सेवक सातों दिन 24 घंटे जवाबदेह हैं। एक विडंबना यह भी है कि प्रायः विशिष्ट काम करने का श्रेय मिले न मिले, लेकिन नाकामी सिर पर मढ़े जाने का खतरा रहता है, जिसे 'प्रोफेशनल हजार्ड' कहते हैं । इस वातावरण का प्रभाव मानसिक स्वास्थ्य और पारिवारिक जीवन पर पड़ता है। सेवा में किसी स्थान पर न्यूनतम तैनाती की अवधि की गारंटी नहीं होती। कुछ विश्लेषकों के अनुसार, सिर्फ आठ प्रतिशत आईएएस अधिकारी दो या दो वर्ष से अधिक समय तक स्थानांतरित नहीं हुए 30-35 वर्ष की औसत सेवा अवधि में करीब 20 स्थानांतरण सामान्य बताए गए हैं।

राजनीतिक व्यवधान भी सेवा में एक बड़ी समस्या मानी जाती है, मगर यह भी एक भ्रांति ही है कि सभी राजनीतिक व्यक्ति गलत काम बताते हैं। सर्विस छोड़ चुके कुछ अधिकारियों का यह भी कहना था कि विकट परिस्थिति, बनआउट, वर्षों बाद भी केवल जांच आदेशित होने पर मीडिया में उन्हें दोषी मान लेने की प्रवृत्ति आदि ने उनके मनोबल को प्रभावित किया। स्टैंडिंग कमेटी की रिपोर्ट के अनुसार, आईएएस में 70 फीसदी से अधिक

अधिकारी आईआईटी, आईआईएम या एमबीबीएस पृष्ठभूमि के पाए जाते हैं। कुछ विशिष्ट शैक्षिक पृष्ठभूमि के अधिकारियों को यह लगता है कि सेवा में उनके हुनर का उपयोग नहीं हो पा रहा है, उन्हें कार्य संतुष्टि नहीं मिल रही है, इसलिए वे त्यागपत्र दे देते हैं।

महिला अधिकारियों की अलग चुनौतियां होती हैं। प्रायः जिस स्थान पर पति या बच्चे हैं, वहां तैनाती नहीं मिल पाती। कई बार महिला अधिकारी तैनाती के स्थान पर अकेले ही निवास करती हैं। ऐसे में, एकाकीपन होना स्वाभाविक है। यद्यपि आईएएस में महिला अधिकारियों की संख्या 21 से 23 प्रतिशत है, फिर भी समान बैच के पुरुष अधिकारी को चुनौतीपूर्ण पोस्टिंग मिल जाती हैं, पर महिला अधिकारी को वैसी पोस्टिंग मिले, यह जरूरी नहीं है, तो कुंठा होना स्वाभाविक है।

प्रत्येक मनुष्य भिन्न है। हर व्यक्ति की इच्छा, स्वप्न, सफलता, खुशी, चुनौती, सब अलग होती है। जो भी हम प्राप्त करना चाहते हैं, उसके लिए केवल एक ही जीवन है। अगर आईएएस अधिकारी सेवा का परित्याग करना चाहता है, तो यह उसका व्यक्तिगत अधिकार और निर्णय है। वैसे सर्विस छोड़ना उनके लिए ही संभव हो पाता है, जिनके पास दूसरे विकल्प हो ।

Date: 05-09-26

सेवा त्यागने की एक बड़ी वजह दबाव भी

आमोद कुमार, (वीआरएस लेने वाले आईएएस)

इसमें कोई दोराय नहीं कि भारतीय प्रशासनिक सेवा (आईएएस) सिर्फ इस देश की नहीं, पूरी दुनिया की सबसे अच्छी नौकरी है। कम उम्र में ही इसमें बड़ी जिम्मेदारियां मिलती हैं। इसमें मिलने वाला सेवा संतुष्टि का भाव भी अन्य नौकरियों में विरल है। यहां तक कि पद छोड़ने वाले अधिकारी भी मानते हैं कि आईएएस बहुत अच्छी नौकरी है और इसमें हर किसी को जाना चाहिए। फिर भी, कुछ अधिकारी अपना सेवा-काल पूरा नहीं करना चाहते, जिसके कुछ कारण होते हैं।

इन कारकों को 'पुल' और 'पुश' में बांटना उचित होगा । 'पुल' कारक हैं, जो सरकारी सेवा से बाहर निकलने के लिए आपको आकर्षित करते हैं, जबकि 'पुश' सेवाछोड़ने के लिए मजबूर करने वाले कारक हैं। हर अधिकारी के लिए अलग-अलग कारण हो सकते हैं। पहले 'पुल' कारकों की चर्चा। इसमें पहला कारण है, निजी क्षेत्रों में अवसरों की प्रचुरता और उनमें आर्थिक आकर्षण असल में, निजी क्षेत्र बहुत तेजी से विकसित हो रहा है। मसलन, उदारीकरण के दौरान एक आईएएस अधिकारी और निजी क्षेत्र के समान ओहदे के किसी अफसर के वेतन में जहां एक और पांच का अनुपात था, वह बढ़कर अब एक और दस का हो चुका है। दूसरा, निजी क्षेत्र का एक तय दायरा होता है

और इसमें तय लोगों से ही वास्ता पड़ता है। इसके उलट, आईएएस अधिकारियों के कामकाज का दायरा काफी व्यापक होता है। इसमें उन्हें न्यायपालिका से भी जूझना पड़ता है, और नेताओं व कारोबारियों से भी । बरिष्ठ व कनिष्ठ अधिकारियों के साथ-साथ तमाम एजेंसियों से भी उन्हें साबका रखना पड़ता है। तीसरा कारण अधिकारियों की मानसिकता है। सरकारी क्षेत्र में जहां 60 साल तक सेवा देने का मौका मिलता है, वहीं निजी क्षेत्र में यह 70 साल तक हो सकता है। ऐसे में, कुछ अधिकारियों को लगता है कि बाद में निजी क्षेत्र का हिस्सा बनना ही है, तो जल्द ही ऐसा क्यों न कर लिया जाए।

चौथा कारण है, अनुभव कमाना । कई आईएएस अधिकारी निजी क्षेत्र के कामकाजी माहौल को समझने के लिए पद छोड़ते हैं। हालांकि, कई बार यह कदम उनके लिएदूर के ढोल जैसा बन जाता है। पांचवां कारण, परिवार की चिंता । उन्हें लगता है कि सरकारी क्षेत्र में रहकर वे अपने बच्चों के लिए उतना कुछ नहीं कर सकेंगे, जो सिस्टम से बाहर निकलकर कर सकते हैं। और, छठा कारक है, मन की करना| कई आईएएस अधिकारी मनोनुकूल काम करना चाहते हैं, लेकिन पूंजीगत या अन्य अभाव उनके कदम रोक देते हैं। फिर, सरकारी नौकरी के समानांतर कोई अन्य काम करने की उन्हें मनाही भी होती है, इसलिए पद छोड़ना उन्हें ज्यादा उचित लगता है।

'पुश फैक्टर' की बात करें, तो पहला कारण है- अत्यधिक स्थानांतरण | कुछ अधिकारियों को बार-बार स्थानांतरित किया जाता है। कई बार तो उन्हें इसकी वजह भी नहीं बताई जाती। दूसरा, लंबे समय तक ऐसे पद पर नियुक्त कर देना, जो अधिकारी के मन लायक नहो अथवा मुख्य धारा से अलग हो। इसमें अधिकारी के लिए बहुत कुछ करने को नहीं होता। तीसरा पदोन्नति रोक देना, वह भी बिना कारण बताए, अवैधानिक रूप से। मसलन- केंद्रीय कर्मचारियों के लिए 'इम्पैनलमेंट' होता है, यानी पदोन्नति के आधिकारिक पैनल या सूची में अधिकारियों के नाम शामिल किए जाते हैं। इसमें सरकार किसी का भी नाम दे सकती है। सीनियर जूनियर का भी ध्यान नहीं रखा जाता। तो, जब अफसर यह देखता है कि उसके अधीनस्थ को पदोन्नति दे दी गई है, जिसकी कोई ठोस वजह भी नहीं, तो वह पद छोड़ने का फैसला कर सकता है।

चौथा कारण है, भविष्य में ऊंचे पद पर पहुंचने की संभावना न देखना और पांचवां, कामकाज का दबाव । एक आईएएस अफसर के लिए नौकरी चौबीस घंटे की होती है। उसका फोन दिन-रात बजता रहता है। नतीजतन, वह अपने परिवार व बच्चों को जरूरी समय नहीं दे पाता । उत्तर प्रदेश में तो छुट्टी का यह आलम है कि होली, दीपावली या 31 दिसंबर जैसे मौकों पर रात-रात भर वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग होती रहती है। ऐसे में शांतिपूर्ण जीवन की चाह में अधिकारी पद छोड़ देता है। हालांकि, पदछोड़ने की एक बड़ी वजह दबाव भी है, जो राजनीतिक भी हो सकता है और गैर-राजनीतिक भी। कभी-कभी अधिकारी के खिलाफ ऐसी जांच शुरू हो जाती है, जिसका कोई भविष्य नहीं होता, पर इस बहाने उसे पांच-दस साल जरूर परेशान किया जाता है। किसी से झगड़ा होने, लंबी छुट्टी न मिलने अथवा भावावेश में भी अधिकारी पद छोड़ते हैं। कभी-कभी स्वास्थ कारण भी वजह बनते हैं।

एक बात और, जो 'कला संकाय की पृष्ठभूमि से आते हैं, उनको सरकारी सेवा से बाहर नौकरी मिलनी मुश्किल होती है, यानी उनका 'पुल फैक्टर' कमजोर होता है, बेशक 'पुश फैक्टर' मजबूत हो। जबकि, आईआईटी, आईआईएम

जैसे क्षेत्रों से आने वाले अधिकारियों को सेवा से बाहर आकर्षक नौकरी आसानी से मिल जाती है। वैसे, कई अधिकारियों में यह भावना भी होती है कि उनकी बनाई नीतियां चूंकि लाखों-करोड़ों लोगों को प्रभावित कर रही हैं, इसलिए तमाम मुश्किलों ('पुश') के बावजूदवे 'पुल' की तरफ नजर नहीं डालते।

अगर मैं अपनी बात करूं, तो मेरे पद छोड़ने में 'पुल' और 'पुश', दोनों कारक जिम्मेदार हैं। मैंने आईआईटी, कानपुर से बीटेक और एमटेक किया है। अमेरिका के हार्वर्ड से 'पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन' (लोक प्रशासन) से मास्टर्स की डिग्री ली। आईआईएम, लखनऊ से पीएचडी हूं। इतना ही नहीं, उत्तर प्रदेश के दो-दो मुख्यमंत्रियों के साथ काम किया, यूएसएड की एक बड़ी परियोजना का हिस्सा बना, और तो और 65-70 देशों की यात्राएं कीं। फिर अपने सेवा कार्य के दौरान कई ऐसे काम किए, जिससे मुझे संतुष्टि थी, इसलिए सरकारी नौकरी के प्रति मुझमें बहुत आकर्षण नहीं बचा। हां, 'पुश फैक्टर' यह था कि बीते कुछ समय से मुझे 'साइड पोस्टिंग' दी जा रही थी। हालांकि, उस समय का इस्तेमाल मैंने पीएचडी करने और घूमने-फिरने में किया था।